**International Journal of Humanities and Social Science Research**
**ISSN: 2455-2070; Impact Factor: RJIF 5.22**
**www.socialresearchjournals.com**
**Volume 2; Issue 9; September 2016; Page No. 74-76**

# महाभारत कालीन : नारी विषयक चिन्तन के दुर्बल पक्ष

**डॉ० साधना सहाय**

प्राचार्या, ई० ने० म० स्ना० महाविद्यालय, मेरठ, उत्तर प्रदेश, भारत।

**सारांश**

महाभारत, भारत के राष्ट्रीय इतिवृत्त एवं चरित का अत्यन्त मौलिक ग्रंथ है। इसको भारतीय संस्कृति का सम्पूर्ण आलेख कहें तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। संस्कृति ही नहीं महाभारत इतिहास भी है। मोक्ष प्राप्ति का मार्ग बताने वाला तथा जीवन के प्रत्येक पथ पर आने वाले संकटों की पहचान कराने वाला अद्भुद ग्रंथ भी है। साथ ही उन संकटों से मुक्ति दिलाने वाले उपायों को बताने वाला धर्मग्रंथ भी है। इस ग्रंथ की सबसे बड़ी विशेषता है भगवद् गीता का ज्ञान, जो श्री कृष्ण द्वारा अर्जुन को कुरुक्षेत्र के युद्ध प्रांगण में दिया गया था भगवद्गीता सम्पूर्ण मानव जाति की रक्षा करने में समर्थ तथा ज्ञान–भक्ति–कर्म की विशद व्याख्या करने के कारण एक कालजयी रचना बन गयी है। आज भी सम्पूर्ण विश्व में इसके महत्व को स्वीकारा जाता है। इसीलिए महाभारत को 'पञ्चमो वेदः' भी कहा गया है।

**मूल शब्दः** महाभारत, सती–प्रथा

## प्रस्तावना

यह एक कटु सत्य है कि महाभारत पारिवारिक कलह–कलेशों की दर्दनाक गाथा भी है। महाभारत के युद्ध के पीछे द्रौपदी (जो एक नारी है) कारण बनी। अतः यह जानना नितान्त अनिवार्य है कि नारी चिन्तन सम्बन्धी ऐसे कौन से दुर्बल पक्ष रहे जिनके कारण इतने भीषण युद्ध की परिस्थितियां बनीं।

महाभारत में नारी विषयक सामाजिक चिन्तन के दुर्बल पक्ष प्रबल रूप में दृष्टिगोचर होते हैं, जैसे नियोग प्रथा, सती प्रथा, बहुपत्नी प्रथा, राक्षस, पैशाच विवाहों को मान्यता देना, स्त्री को 'आत्मदान' तक के लिए प्रेरित करना, कौमार्य भंग करने वाले पुरुष को दंडित करने के स्थान पर कन्याओं को दोषी मानना, पुत्र को श्रेष्ठ सिद्ध करना आदि ऐसी अवधारणाएं थीं जिनके कारण यह युद्ध हुआ।

महाभारत में नारी की प्रशंसा भी स्थान–स्थान पर की गयी है, जैसे 'प्रशंसन्ति भार्यां च गत यौवनम्[1]' अर्थात् भार्या का यौवन बीत जाने पर प्रशंसा करनी चाहिए। इसी प्रकार स्त्री को गृहलक्ष्मी कहा गया है स्त्रियां अत्यन्त सौभाग्यशालिनी, आदर के योग्य, पवित्र तथा घर की शोभा होती है। अतः इनकी विशेष रूप से रक्षा करनी चाहिए।

**पूजनीया महाभागाः पुण्याश्च गृहदीप्तयः।**
**स्त्रियो श्रियो गृहस्योवत्तास्तस्माद् रक्ष्या विशेषतः।।[2]**

महाभारत में यह प्रशंसा साध्वी स्त्री की ही की गयी है, अर्थात् जो पति की सेवा को ही अपना परम धर्म मानती हो, जिसे स्वर्ग प्राप्ति मात्र पति सेवा से ही मिल सकती है जो पति की इच्छा–अनिच्छा का पूर्ण रूपेण ध्यान रखती हो[3] जैसे वृद्ध, क्रोधी, दरिद्र पति को श्वेतकाकीय उपायों से प्रसन्न रखने वाली जरत्कारू अपमान के कड़वे घूंट पीकर भी उन्हीं की सेवा में संलग्न रहती है। इसी प्रकार सुकन्या एवं नारायणी इन्द्रसेना ने अपने वृद्ध–सहस्रवर्षीय पतियों च्यवन एवं मुद्गल ऋषियों को निरन्तर सेवा की।[4] पति चाहे शाप ग्रसित हो (एक प्रकार से अपराधी) जीवित हो मृत हो, रोगी हो, नरक–पतित हो तब भी वह सेवा सुश्रुषा का पात्र है।[5]

इसके विपरीत यदि किसी स्त्री ने पुरुष का चिन्तन भी कर लिया तो वह उसका अधर्म है, पर पुरुष में आसक्त स्त्री सर्पिणी की भांति भयंकर तथा घर में न रखने योग्य मानी गयी।[6] इसी कारण शाल्व पर अनुरक्त अम्बा को भीष्म ने अपने भाई विचित्रवीर्य के लिए स्वीकार नहीं किया दूसरी ओर भीष्म द्वारा अपहृत किये जाने के कारण शाल्व ने भी अम्बा को ठुकरा दिया और वह कहीं की भी न रही। विवाह की दृष्टि से भी महाभारत में अनेक विसंगतियां परिलक्षित होती हैं, जैसे पुरुष अनेक विवाह कर सकता था[7] (पाण्डु की दो पत्नियां थीं कुन्ती और माद्री, प्रत्येक पाण्डव की एक से अधिक भार्या थीं, वृहद्रथ की दो पत्नियां सगी बहने थीं, स्त्री पर्व में मृत राजाओं में प्रायः सभी की एक से अधिक पत्नियों का वर्णन मिलता है) पत्नी के जीवित रहते हुए भी पुरुष के अनेक विवाह विधि सम्मत थे किन्तु पत्नी पति की मृत्यु के उपरान्त भी दूसरा विवाह नहीं कर सकती थी, विवाह करना तो दूर उसे जीने तक का अधिकार नहीं था।

विवाहित पुरुष को कन्या देने में कोई दोष नहीं माना जाता था इतना ही नहीं दो या दो से अधिक बहनों का विवाह एक ही पुरुष से करा दिया जाता था। जैसा कि सत्यवती के पुत्र विचित्रवीर्य के विवाह के लिए भीष्म चाहते तो काशी नरेश की एक ही पुत्री को ला सकते थे पर उन्होंने तीनों बहनों का हरण किया तथा दो बहनों का विवाह विचित्र वीर्य से कराया। स्त्रियों के लिए बहुपतीत्व प्रथा नहीं थी। द्रौपदी का पांचों भाइयों के साथ विवाह भी एक कष्टकारी और दुःखद प्रसंग था जब कुन्ती ने अपने पुत्रों को एक सूत्र बांधे रखने के लिए अन्तयन्त कुटिलता से अनजान बनते हुए आपस में बांटने की बात कह दी। स्वयं महाभारतकार महर्षि वेदव्यास को भी इस विवाह को धर्म संगत सिद्ध करने के लिए अत्यधिक प्रयास करना पड़ा। महर्षि व्यास ने द्रौपदी के विवाह को लोकोत्तर होने के कारण निर्दोष माना[11] तथा साधारण जन को ऐसा न करने का निर्देश दिया। द्रौपदी के भाई तथा पिता द्रुपद दोनों ने पांचों भाइयों के साथ द्रौपदी के विवाह की अनिच्छा प्रकट की थी। द्रुपद के निम्न वचनों से स्पष्ट होता है कि उस समय एक पुरुष की तो बहुत सी पत्नियां हो सकती थीं किन्तु एक पत्नी के अनेक पति धर्म संगत नहीं माना जाता था।

**एकस्य बह्वयोः विहिता महिष्यः कुरूनन्दन।[12]**
**नैकस्या बहवः पुंसः श्रूयन्ते पतयः क्वचित्।।**

आठों विवाह के प्रकार (जो मनुस्मृति में वर्णित है) के उदाहरण महाभारत में मिलते हैं राक्षस विवाह के उदाहरण स्वरूप–भीष्म ने

अपने भाई विचित्र वीर्य के विवाह हेतु काशिराज पर चढ़ाई कर उन्हें परास्त किया फिर बलपूर्वक उनकी तीनों पुत्रियों (अम्बा, अम्बिका, आम्बलिका) का हरण कर लिया। यह एक ऐसा कृत्य था जिसकी प्रशंसा कदापि नहीं की जा सकती। वास्तव में इस प्रकार के विवाह को मान्यता ही नहीं दी जानी चाहिए थी। राक्षस विवाह को मात्र हेय बताकर इस नारी प्रताड़ना परक विवाह की जितनी भर्त्सना की जाए उतनी कम है। यह अपराधिक प्रवृत्ति है विवाह नहीं तथापि उसे मान्यता दी गयी। यद्यपि आज भी बहुत सी कन्याओं का अपहरण कर विवाह करने की घटनाएं घटित होती हैं किन्तु इन्हें करने वालों को अपराधी माना जाता है तथा कानून दण्ड दिया जाता है।

महाभारत में भी इस विवाह ने भविष्य में एक बड़ी घटना को जन्म दिया। काशी नरेश की बड़ी पुत्री अम्बा ने भीष्म से निवेदन किया कि वह शाल्व नरेश से स्नेह करती है तो भीष्म ने अम्बा को शाल्व नरेश के पास भिजवा दिया किन्तु भीष्म द्वारा अपहरण किए जाने के कारण अम्बा को शाल्व नरेश ने ठुकरा दिया। परिणामस्वरूप अम्बा का सम्पूर्ण जीवन अंधकार मय हो गया। अम्बा ने भीष्म के कुकृत्य के लिए उसे मृत्यु दिलाने हेतु कठोर तप किया और अन्त में दूसरे जन्म में शिखण्डी बनकर वह भीष्म की मृत्यु का कारण बनी। कदाचित् इसी कारण इस विवाह प्रकार का शनैःशनैः लोप होता गया या यों कहें कि सामाजिक मान्यता समाप्त होती गयी।

महाभारत में भी कन्या को पुत्र की अपेक्षा हेय माना गया है। पुत्र की अनिवार्यता बताई गई क्योंकि पुत्र ही इहलोक एवं परलोक को सुधारता है। पुत्र ही नरक में पड़े हुए अपने पितृजनों का उद्धार कराने में सक्षम हैं, पुत्र सुख का परम साधन है–

**पुन्नाम्नो नरकाद् यस्मात् पितरं त्रायते सुतः**
**तस्मात् पुत्र इति प्रोक्तः स्वयमेव स्वयंभुवा।**
**(पुत्रेण लोकान् जयति पौत्रेण आनन्दत्यमश्नुते)[13] आदि**

अर्थात् पुत्र पुं नामक नरकलोक से पितृजनों को तारता है। पुत्र के पुत्रों (पौत्रों) से अक्षय सुखों की प्राप्ति होती है। पुत्र का उच्च एवं अनिवार्य स्थान होने के कारण ही राजा द्रुपद की पत्नी ने शिखण्डी के जन्म पर अपनी सपत्नीयों के अवहेलना के भय से उस पुत्री को पुत्र के रूप में प्रकट किया[14] अर्थात् पुत्री जन्म तिरस्कार एवं अवहेलना को देने वाला होता था। संभवतः इसीलिए पुत्री को संकट कहा जाता था।[15]

पुत्री पिता की चिन्ता का कारण बताई गई इतना ही नहीं पुत्री का जन्म माता–पिता तथा पति तीनों कुलों को संशय में डालने वाला माना गया।

यद्यपि महाभारत में कुछ स्थलों पर पुत्री को पुत्र तुल्य माना गया है, जैसा– पुत्र वैसी ही पुत्री की अवधारणा भी देखने को मिलती है, किन्तु इस प्रकार का वर्णन नगण्य है तथा कुछ राजपुत्रियों जैसे– सावित्री, सुवर्चला आदि के संदर्भ में ही कहा गया है। सामान्य कन्या के वर्णन में ऐसी सोच महाभारत में दिखाई नहीं देती। यही कारण है कि वैदिक एवं पौराणिक युग की भांति ही महाभारत भी पुत्र की श्रेष्ठता का संदेश लेकर ही आया।

## पुत्र प्राप्ति के लिए नियोग प्रथा

यों तो महाभारत में परपुरुष का चिन्तन भी अपराध माना गया है, किन्तु सन्तानोत्पत्ति के लिए विशेषकर पुत्र प्राप्ति के लिए पर पुरुष से संसर्ग कराने की कुप्रथा भी इसी काल में पनपी। सत्यवती की पुत्रवधूओं को न चाहते हुए भी महर्षि व्यास के साथ संसर्ग करना पड़ा क्योंकि उत्तम गति अर्थात् मोक्ष प्राप्ति पुत्र के बिना नहीं हो सकती, इस प्रकार की धारणा की स्थापना के कारण स्वयं पुरुष अपनी पत्नी को दूसरे पुरुषों से साहचर्य कराने को विवश करते थे। पाण्डु ने कुन्ती को नियोग द्वारा पुत्र प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया था।[16] इतना ही नहीं भारतीय समाज में गुरु की पत्नी के साथ संसर्ग को ब्रहमहत्या के समान महापाप माना गया है, किन्तु पुत्र प्राप्ति के लिए इस नियम का भी निषेध कर दिया गया अर्थात् यदि गुरु चाहता है तो शिष्य उसकी पत्नी के साथ समागम कर सकता है। यहाँ यह बात ध्यातत्व है कि आज्ञा पति अर्थात् गुरु से ली जाती थी उसकी पत्नी से नहीं। पत्नी यदि न भी चाहे तो उसे पति की इच्छानुसार पर पुरुष से संसर्ग करना ही पड़ता था या पत्नी चाहे और पति न चाहे तो वह परपुरुष से संसर्ग नहीं कर सकती थी।[17]

परपुरुष से सम्पर्क करने के लिए केवल पति ही पत्नी को बाध्य नहीं कर सकता था अपितु पारिवारिक जन जैसे– सास, ससुर, कुलगुरु आदि भी इसके लिए स्त्री को विवश करते थे सत्यवती ने अपनी दोनों पुत्रवधुओं को नियोग के लिए विवश किया। इच्छा न होने पर भी अम्बिका को पहले तो स्वयं नियोग करना पड़ा किन्तु दूसरी बार उसने स्वयं न जाकर दासी को अपने स्थान पर भेज दिया। देवर द्वारा पुत्रोत्पादन करके अपने पति की वंश वृद्धि करना तो एक सामान्य प्रचलित आपद्धर्म था।[18] नियोग की इस कुप्रथा को इस आधार पर शास्त्रसम्मत एवं तर्क पूर्ण सिद्ध किया गया कि इसका उद्देश्य कामवासना या नारियों का स्वच्छन्द अनैतिक आचरण नहीं है, अपितु यह तो वंश चलाने के लिए पुत्र प्राप्ति का आधार है। प्रश्न यह उठता है कि यह प्रथा शास्त्र सम्मत कैसे मानी जा सकती है जिसमें नारी की इच्छा के विपरीत उससे संसर्ग किया जाए, उसे पुत्र उत्पन्न करने के लिए विवश किया जाए। नियोग प्रथा के विधि विधानों में एक विधान यह भी बनाया गया कि एक स्त्री तीन संतान प्राप्ति तक नियोग कर सकती है। चौथी बार नियोग करने पर वही स्त्री स्वैरिणी और बन्धकी कहलायी जाएगी। इसी कारण पाण्डु के चाहने पर भी कुन्ती ने चौथी बार नियोग करने से स्पष्ट इन्कार किया।[19] इस विधान का भी कोई तर्क संगत आधार दिखायी नहीं देता। प्रश्न यह है कि तीन बार भी नियोग की क्या आवश्यकता है, वंश चलाने में, मुक्ति दिलाने में अथवा पितृजनों का श्राद्ध करने में एक ही पुत्र समर्थ हो सकता है। राजगद्दी पर भी एक ही पुत्र बैठता था, फिर तीन संतान तक नियोग की व्यवस्था क्यों रखी गई।

महाभारत में जहाँ पुत्र प्राप्ति के लिए नियोग प्रथा बनाई गई वहीं दूसरी ओर एक अन्य जघन्य नियम बनाया गया कि यदि पति चाहता है, चाहे वह इच्छा शास्त्र सम्मत है या शास्त्र प्रतिकूल, तब भी नारी को पति की आज्ञा से किसी भी व्यक्ति को आत्मदान करना होगा। यह आत्मदान क्यों होगा? इसका क्या प्रयोजन है? इसका कोई निश्चित नियम नहीं बताया गया। मात्र पति जिससे कहेगा पत्नी को उसे अपना दान करना होगा। यह आत्मदान करके नारी अपने पति के साथ परमगति को प्राप्त करेगी, ऐसी मान्यता स्थापित की गई, जैसे कि महाभारत की एक कथा के अनुसार ओधवती अपने पति के कहने पर अतिथि को अपना आत्मदान करती है और इसके उपरांत परमगति को प्राप्त करती है।[20]

## महाभारत काल में कन्या

महाभारत काल में अपने कौमार्य की रक्षा करने का पूर्ण उत्तरदायित्व कन्या पर ही होता था, पुरुष पर नहीं अर्थात् किसी कन्या का कौमार्य यदि भंग हो जाता था तो वह समाज में व्यभिचारिणी मानी जाती थी किन्तु उसके साथ कुकृत्य करने वाला पुरुष न तो दंड का अधिकारी होता था और न ही निंदा या तिरस्कार का पात्र। 'अकर्त्तव्यं कन्याया गर्भधारणम्'[21] तथा 'गर्भेण दूष्यते कन्या' आदि कहकर गर्भवती कन्या का पाप सिद्ध किया गया, इतना ही नहीं तत्कालीन समाज में ऋषि, मुनि या अन्य कोई

तेजस्वी व्यक्ति कुमारी कन्याओं से उन्हें शाप का भय दिखाकर उनका संभोग कर सकता था (एक प्रकार का बलात्कार) तथा उस कन्या के गर्भ धारण कर लेने पर या उससे पहले ही उसे छोड़कर चला जाता था। इतने पर भी उस व्यक्ति के लिए किसी प्रकार के दण्ड का विधान नहीं किया गया अपितु उन कन्याओं को ही पुरुषों के इस कुकृत्य को छिपाना पड़ा। इसका जीता जागता उदाहरण महारानी सत्यवती एवं कुन्ती हैं। पाराशर ऋषि एवं सूर्य देवता के द्वारा बलात् संभोग की गई ये कन्यायें अपनी संतान के जन्म के वृत्तान्त को छिपाने के लिए विवश हुईं।

**सती–प्रथा**

पति के बिना स्त्री के लिए मरना ही श्रेयस्कर माना गया, क्योंकि 'पति बिना जीवति या न सा जीवति दुःखिता', 'पतिं बिना मृतं श्रेयो' आदि धारणाऐं स्थापित करके स्त्री के सती होने की प्रथा प्रचलित की गई। इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि स्त्री का ही पति की चिता के साथ जलना (सती होना) अनिवार्य था, पति का नहीं अर्थात् यदि किसी की पत्नी की मृत्यु पहले हो जाती थी तब पति को उसकी चिता के साथ जलने की आवश्यकता नहीं थी क्योंकि मृत्यु के उपरांत पत्नी मृत्युलोक में भी पति की प्रतीक्षा करती थी। इसी धारणा के रहते ब्रह्माणी, पतिव्रता ने पति के साथ चितारोहण किया। श्रीकृष्ण की पत्नियों में रुक्मिणी, गान्धारी, शैव्या, हैमवती एवं साम्वती ने भी परित्याग किया। बचपन से ही कन्याओं के मन में यह संस्कार प्रेषित किए जाते थे कि 'पतिव्रतात्वं भार्यायाः परमोधर्म उच्यते' तथा पति प्रसन्नता से ही रति, प्रीति, धर्म एवं परमगति प्राप्त की जा सकती है।

'न सा स्त्री हर्षभमन्तव्या यस्यां भर्ता न तुष्यति' स्त्री को अपने प्राण देकर भी हित चिन्तन करना चाहिए।

**न कामेषु न भोगेषु नैश्वर्य न सुखे तथा**
**स्पृहा यस्या यथापत्यो सा नारी धर्मभागिनी।।**
**पतिर्हि देवो नारीणां पतिबन्धुः पतिर्गतिः।**
**पत्या समा गतिर्नास्ति दैवतं वा यथा पतिः।।**

पति ही स्त्री का जीवन था। पति ही आन्नद। पति ही नारी जीवन का परम भूषण था। पति ही परम गुरु। अतः उस पति के जीवित न रहने पर नारी के लिए इस संसार में न तो कोई लक्ष्य अवशिष्ट रह जाता था और न ही कोई आनन्द। ऐसा नीरस एवं प्रताड़ना परक जीवन जीने की अपेक्षा मर जाना ही श्रेयस्कर था। यही कारण था कि उच्च वंश की कुलीन नारियां वैधव्य का कठोर, अपमानजनक, हताशा भरा जीवन जीने की अपेक्षा मरना अधिक पसंद करती थीं। कहने का अभिप्राय यह है कि एक प्रकार से नारी को आत्महत्या के लिए प्रेरित किया जाता था तथा इस निदंनीय कर्म को नारी के धर्म एवं त्याग कहकर परिभाषित किया गया। महाभारत काल में स्थापित सती प्रथा युगों–युगों तक भारत में प्रचलित रही तथा पतिव्रत धर्म के नाम पर जलती एवं जलायी जाती रही। यद्यपि अंग्रेजी शासन में राजा राममोहन राय के सहयोग से यह कुप्रथा समाप्त की गई, किन्तु अब भी यदा कदा सती होने की घटना सुनाई दे ही जाती है।

अतः नियोग एवं आत्मदान जैसे नियम उस युग के पुरुष के स्वछन्द एवं व्यभिचारी दृष्टिकोण को ही प्रकट करते हैं जिसने अपने सुख के लिए भांति–भांति के नियम बनाकर नारी को उन नियमों की बेड़ी में जकड़ दिया। स्वयं तो जिस किसी स्त्री के साथ सम्पर्क स्थापित किया ही नारी को भी जिस किसी के साथ सम्पर्क करने के लिए बाध्य किया और यह सब उसने परमगति प्राप्त करने में सहायक घोषित करके किया। धर्म और भगवत् प्राप्ति के नाम पर नारि को पतित एवं एक प्रकार से गणिका बनने के लिए विवश किया गया दूसरी ओर स्त्री से त्रुटिवश यह कार्य हो जाता था तो वह व्यभिचारिणी ठहरायी जाती थी। संभवतः इसी भय के कारण सत्यवती ने महर्षि व्यास के जन्म को तथा कुन्ती ने कर्ण के जन्म के वृत्तान्त को छिपाया था जिसका परिणाम कर्ण का कुंठित हो जाना, राजगद्दी से भी अलग हो जाने के रूप में भोगना पड़ा। स्वयं युधिष्ठिर ने इस अवस्था पर खेद प्रकट किया था कि यदि कर्ण भाई के रूप में प्रारम्भ से ही मिला होता तो वह उस सम्मान (ज्येष्ठ पाण्डव) से वंचित न होता जिसका वह अधिकारी था। कहने का अभिप्राय यह है कि यदि पति कहे तब तो परपुरुष सम्पर्क और उससे उत्पन्न होने वाली संतान शास्त्र सम्मत है, धर्म के अनुकूल है, किन्तु यदि वही आचरण नारी स्वेच्छा से कर ले तो वह स्वयं और उसका पुत्र दोनों हेय एवं त्याज्य हैं। वास्तव में यह मानसिकता पुरुष के अहंभाव एवं उसको नारी की अपेक्षा श्रेष्ठ ठहराने वाली ही प्रतीत होती है।

**सन्दर्भ संकेत**


1. महाभारत – उद्योग पर्व – 35.59
2. वही, 38.11
3. आदि पर्व – 47. 10–12
4. विराट पर्व – 21.10, 11
5. महा० आदि पर्व – 74.45
6. वन पर्व – 294. 26–27
7. महाभारत आदि पर्व – न चाप्यधर्मः कल्याण बहुपत्नीकृतां नृणाम्। स्त्रीणामधर्मः सुमहान् भर्तुः पूर्वस्य लघङने।। 157.36
8. महाभारत उद्योग पर्व – 187.9
9. आदि पर्व – 102.3, 10–11
10. आदि पर्व – 102.65
11. वही, 196 45–53
12. वही, 194.27
13. आदि पर्व – 74. 38–39
14. उद्योग पर्व – 192.2
15. आदि पर्व – आत्मा पुत्रः सखा भायी कृच्छं तु दुहिता किल। स कृच्छान्मोचात्मानं मां च धर्मं नियोजन।। 158.11

अर्थात् – पुत्र आत्मवत् है पत्नी मित्र सदृश है और पुत्री निश्चित रुप से संकट है, इसीलिए मुझे धार्मिक यश दें।

16. आदि – 121. 4–8
17. आदि – 3.87
18. अनुशासन – 44.52, 77–78
19. आदि पर्व – 122. 77–78
20. अनु० – 2.56, 85
21. वन – 308.8